THE RICH CULTURAL PAST OF INDIA : CONCERNS AND DEMYSTIFICATION OF REALITIES

भारत का समृद्ध सांस्कृतिक अतीत : चिंताएँ एवं वास्तविकताओं का रहस्योद्घाटन

National Seminar

on

The Rich Cultural Past of India : Concerns and Demystification of Realities

19-20 August, 2023

Organized By:

Department of Sociology,
Sardar Bhagat Singh Govt. P.G. College
Rudrapur (U.S.Nagar), Uttarakhand.
(Affiliated to Kumaun University, Nainital)

Sponsored By:

Indian Council of
Social Science Research

Indian Council of Social Science Research (ICSSR), New Delhi.

VIVEK PRAKASHAN

Dr. Anchalesh Kumar

15

साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में नारी की सांस्कृतिक भूमिका

डॉ० भावना जोशी*

डॉ० विवेकानन्द पाठक**

संस्कृति, पर्व–त्योहार के उल्लास के केन्द्र में नारी ही है। लोकगीतों, लोकगाथाओं व लोककथाओं में सर्वत्र नारी की उपस्थिति भरपूर है। दिलों को जोड़ने तथा आनन्द से पूरित करने वाले उत्सव, व्रत, त्योहार, मेले नारी के बिना अधूरे हैं। नारी के माध्यम से ही लोकजीवन में रची–बसी संस्कृति की अभिव्यक्ति सम्भव है। स्वातन्त्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में लोक जीवन में रची–बसी संस्कृति का सशक्तता से चित्रण किया गया है। उत्तरी बिहार प्रांत में वर्षा के आवाहन के लिए रचाया जाने वाला जाट–जटिन खेल गाँव की लड़कियों द्वारा ही मनाया जाता है। फागुन की बावरी, मतवाली हवा से आनन्दित हो फाग के रस भरे गीत महिलाएँ ही गुनगुनाती हैं। इसके अतिरिक्त सामा–चकेवा पर्व की सामूहिक क्रिया भी परानपुर की कुमारी, ब्याही, बेटा–बेटी वाली अबोध, बूढ़ी सबके द्वारा सम्पन्न की जाती है। महिलाएँ ही सामूहिक गान करती हैं। व्रत, त्योहार आदि से सम्बन्धित गीतों को भी स्त्रियाँ गाती हैं। 'जल टूटता हुआ' उपन्यास में नागपंचमी उत्सव की बेला पर गीता अपने सुरीले कंठ से सुरीला–सा गीत पेश करती है–

"कुल्ही बदरा घिरि–घिरि आवे

पानी तड़पि–तड़पि डरपावे

हरि–हरि पिया–पिया पपिहरवा

बनवां बोले र हरी"[1]

नारी के प्रेम का निश्छल रूप स्वयं नारी द्वारा रचित लोकगीतों से प्रकट होता है।

"ऊँची–ऊँची कूदे लीलै लवै दिन मान

आँख मटे गया प्यारा लौकै चान–चान।"

'जल टूटता हुआ' की बहनी भी गाती है–

"सेजिया से सैंया लागि..."[2]

'थोकदार किसी की नहीं सुनता' उपन्यास की कुंतुलि के माध्यम से भी नारी की परम्परागत प्रेम तथा नारी मन की व्यथा का बोध इन पंक्तियों से व्यक्त होता है–

"नर्बी तारा नीत छन, उजाल ज्यूनिक

*असिस्टेंट प्रोफेसर–हिंदी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, कोटाबाग (नैनीताल)

**असिस्टेंट प्रोफेसर–हिंदी विभाग, सरदार भगत सिंह राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रुद्रपुर (ऊधम सिंह नगर), उत्तराखण्ड ; मोबाईल नं.-9411793208.

यो हियो बज्यूण हैजो, रफत उनीक

आकाश में है असंख्य तारे

और है भरपूर चाँदनी

वहाँ फेंकूँ अपने मन को

एक ही धुन है यहाँ

सिर्फ उन्हीं की....उन्हीं की ..."[3]

कहीं नारी नृत्य द्वारा भी अपनी भावनाओं को प्रकट करती है। 'मेंहदी रंग लायो री' लोकगीत पर ग्रामीण नारियाँ गरबा नृत्य पेश करती है, कहीं प्रियतम वियोग में प्रेमिका व्याकुल होकर अपने प्रियतम से लौट आने का आग्रह निम्न पंक्तियों में करती है–

"रे निर्मोही, लौट आ

लौट आ मेरे सुबरन लौट आ।"[4]

अधिकांश लोकगीतों की सृष्टि नारी द्वारा ही हुई है, फिर चाहे, वे गीत तीज–त्योहारों के हो या विवाह, संस्कार के या प्रियतम–प्रियतमा के गीत। संस्कार परक गीतों की रचयिता स्वयं नारी है और ये गीत भी मुख्यतः नारी द्वारा ही गाए जाते हैं, अतः नारी–हृदय की कोमलता, करुणा व सहिष्णुता इन संस्कार गीतों में सहज एवं स्वाभाविक दिखती है। 'गोबर गणेश' उपन्यास में जनमवार गीत–शकूनादे, शकूनादे महिलाएँ तन्मयता से गाती हैं। विवाह गीतों में सर्वप्रथम स्वजनों को आमंत्रण भेजा जाता है। लोकनारी सुवा को दूत बनाती है। श्रावण माह की प्रथम तिथि को हरियाला त्योहार मनाया जाता है। इन गीतों में नारी का मायके के प्रति प्रेम दर्शाया गया है। इस पर्व पर माताएँ पुत्रियों को मायके बुलाती हैं– "सुवा रे सुवा वनखण्डी सुवा...

चैत मास की संक्रांति को बालिकाओं द्वारा द्वार पूजा की जाती है, जिनमें गृहद्वार के दाक्षिण्य और गृहभण्डार की पूर्णता की कामना की जाती है–

"फूल देई छम्मा देई

तू देई (देहरी) को नमस्कार।[5]

सामान्यतः घर गृहस्थी का सारा कार्य औरतें करती हैं। गौशाला की सफाई और गाय–भैंसों को दुहने से लेकर, खेतों की गुड़ाई–निराई–कटाई और उसे भण्डार में रखने तक सारा दायित्व औरतों पर रहता है। औरत परिवार की मुख्य धुरी है वह परिवार को व्यवस्थित रखती है। इसी प्रकार पर्वोत्सव, व्रत या विशेष कार्यों में नारी ही आँगन–चौतरों को लीपने–सजाने में लगी रहती हैं।

'थोकदार किसी की नहीं सुनता' उपन्यास में फूल देई त्योहार के अवसर पर बिददेवज्यू के आँगन में स्थायी हवन कुण्ठ बना हुआ था, जिसका आरम्भ आज ही के दिन से होता था। कल रात देर तक बौराणज्यू (ब्राह्मण पत्नी) ने उस जगह को लाल मिट्टी और गोबर से लीप दिया था और चारों ओर गेरू लगाकर (उसके ऊपर) गीले पिसे चावलों से ऐपण (अल्पना) बना दिये थे।[6]पूजा–पाठ मनौती पर स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक विश्वास करती हैं। 'हौलदार' में नरूली की पुत्र प्राप्ति के लिए मनौती करते हुए गोपुली काकी कहती है– "परमेश्वर हो, चितइ के गोल्ल देवता। हो मेरे परमेश्वर दुःख, शोक हर लेना और हमारे किसनू ज्याठ ज्यू के घर में एक सुन्दर नाती से आनन्द मंगल रच देना।"[7] स्त्रियाँ अंधविश्वासी भी बहुत होती हैं। 'धरती धन न अपना' की चाची बीमार होने पर डॉक्टर से उपचार न कराके जादू–टोना कराती है। ग्रामीण ओझा रक्खा धूप और गुग्गल को कछड़ी में डालकर उस पर दहकता हुआ कोयला रख कर चाची के नथुनों के पास ले जाकर कुछ बुदबुदाने लगता है और इस मिर्ची की धुनी लगवा कर भूत निकलवानें के चक्कर में चाची को प्राणों से हाथ धोना पड़ता है। नारी परम्परागत रूढ़ियों से पुरुषों से अधिक और निष्ठापूर्वक जुड़ी हुई हैं। लोकगीतों, लोकपर्व–त्योहार तथा लोकविश्वास की तरह लोककथाओं की भूमिका में भी नारी प्रमुख संगिनी रही है। कहीं लोककथाओं के केन्द्र बनकर तो कहीं स्वयं लोककथा को रुचि पूर्वक सुनाती नजर आती है। शैलेश मटियानी की रचनाओं में लोककथा के विभिन्न स्वरूप व उनसे संदर्भित अंचलीय मानसिकता का उद्‌घाटन हुआ है। उन्होंने पिरथुली आमा जैसे चरित्र भी सृजित किए हैं, जो लोककथाओं का कोष है। बचपन में देवकी को पिरथुली आमा अनेक लोककथाएँ सुनाती हैं। राजुली–मालूशाही, सिदू–विदू रमोंलों, सूरज कमल–ब्रह्म कंवल, मोती माला, चन्द्रमाला अजित बफौल व बालक श्रीनाथ की कथाएँ उसे पूर्णतः कंठस्थ हैं। हर रात देवकी हंकारी भरती है और पिरथुली आमा कहती जाती है, "एक समय में गढ़ी चम्पावत नगरी में राजा भरतीचन्द्र नाम के राजा राज्य करता था...या फिर कभी "नागलोक में चन्द्रगिरी–कालीगिरी नाम के दो नाग राज करते थे.... ।"

लोककथाओं में लोकगीतों की लय को जोड़कर पिरथुली आमा लोककथा को और भी अधिक गहन भावात्मकता प्रदान करती है। "साबुली ठुलदी का मन ललकता रहता कि अगर मेरी भी संतान होती तो मैं भी अपने घोंसले में बारात न्योतती, बाजे–गाते बजवाती, नाचती गाती और शकुन आँखर करती गाती...अरे, सुवा रे सुवा....वो, वनखण्डी रे सुवा, हरा तो तेरो गात, सोन पंखी रे सुवा.... सोन पंखी रे ....शकुना दे लाजवंती सीता...बहु ...रानी।"'थोकदार किसी की नहीं सुनता' उपन्यास में कलुवा थोकदार की माँ उसे भगवान के भक्त एक छोटे से बालक प्रह्लाद की कहानी सुनाती है– "हिरन कासिप बालक प्रह्लाद को मार रहा था तो अहारे भगवान की माया देखों, नरसिंह आये, और नरसिंह ठैरे भगवान के अवतार, कमर से नीचे ठैरे तो आदमी और कमर के ऊपर शेर, बस, फिर क्या था, हिरनकासिप को नरसिंह ने ऐसा उचेड़ा कि भगत प्रह्लाद को तो क्या मारता, खुद ही मर गया।...."[8]'उस चिड़िया की कहानी' उपन्यास में चिड़ियों के माध्यम से उपन्यासकार ने नारी की स्थिति उनके साथ होने वाले दुर्व्यवहार, विसंगतियों तथा विषमताओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है।

उपन्यास में समय–समय पर अनेक लोककथाओं जैसे–काफल पाको, तीनै र्‍याटै की फिफिरी,[9] में भूखो मैं सीती आदि अनेक चिड़ियों की कहानियों का उल्लेख किया गया है। पिता की मृत्यु के बाद हरीश एक ऐसी चिड़िया की तलाश में लगा रहता है जिसे वह जानता तक नहीं लेकिन उसकी स्मृति उसके मन में बनी रहती है। वह पार्वती को चिड़िया की कहानी सुनाता है जिसे सुनकर वह रोने लगती है, क्योंकि वह कहानी उसकी जिन्दगी की घटनाओं से मेल खाती है। इस प्रकार लोककथाओं का केन्द्र भी नारी दिखती है और उसे व्याख्यायित भी नारी करती है।'कथा सतीसर' उपन्यास में भी विभिन्न लौकिक क्रिया–कलापों का मुख्य केन्द्र नारी ही है। सरस्वती में स्त्री सुलभ चिन्ता दिखती है– इधर लल्ली रवाना हुई और उधर जो हुआ, घट–अघट उससे सरस्वती के मन में शंकाएँ सिर उठाने लगी। गाषकौल की ड्योढ़ी से कुछ दूर खड़ी सरस्वती और भद्रा शारिका का जाप करती जब तक ताँगा मोड़ पर आँख से ओझल न हुआ। कहीं बिल्ली या औरत रास्ता न काटे, कोई निगोड़ा छींक–छांक ने दे, यह सोच माँ का नाम लेती– माँ शारदा तेरी दया बनी रहे।[10] "दही रस्म में देर रात तक लड़कियाँ तुम्बकनारी (ढोलक जैसे कश्मीरी वाद्य) पर सगुनगीत गाती हैं। लल्ली के मुन्ने को दिन भर गोद में लिए–लिए बड़दादी एक से एक लोरियाँ गाती–

"छुनथ रोनि मंजलस करय गूर–गूर

थल यलि प्योहम अड़राइन

जातुक ल्यूखनय शिवनाथन

वुछमय जातकस छय वुम्बुर पूर

छुनय रोनि मंजलस करय गूर–गूरऽऽ र..."[11]

किस्से कहानियों का निर्वाह भी नारी के माध्यम से हुआ है। सरस्वती को तीन आलसियों की कथा याद आई घर में आग लगी, एक बोला "आग बुझा दो", दूसरे ने करवट बदलकर कहा "ऊंह जाने दो, सुख से रह", तीसरा नींद खराब होने से दोनों पर झुँझलाया, "तुम लोग बकवास करना बन्द करो और चुपचाप सो जाओ।" मातायी का जादू शाम ढलते ही पोते–पोतियों को गिरफ्त में ले लेता। मातायी बच्चों को कथा संसार की अजूबी अनजानी घाटियों में घुमाने ले जाती है।[12] अतः नारी लोकजीवन का महत्वपूर्ण अंग है। उसी के माध्यम से लोकपरम्परा का निर्वाह होता है। इसी कारण नारी लोकजीवन में समाहित लोकतत्वों में अग्रणीय दृष्टिगोचर होती है। समाज में व्रत–त्योहार, आस्था–विश्वास, लोकगीतों, लोककथाओं में हर जगह नारी की उपस्थिति मौजूद है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में नारी की अन्तरंग एवं बहिरंग प्रासंगिता को उपन्यासकारों ने विविध रूपों में अंकित किया है। सामूहिक चेतना के साथ वैयक्तिक चेतना का प्राधान्य आधुनिक नारी में मिलता है। लोकसमाज की इकाई नारी का स्वतंत्र अस्तित्व होते हुए भी उसके जीवन के कुछ पहलू ऐसे भी हैं जहाँ उसका स्वरूप शाश्वत् है।

आज भी अपने स्नेह, ममत्व, उदारता तथा उदात्तता से वह सामाजिक व सांस्कृतिक सम्बन्धों को एकसूत्र में बाँधने को उत्सुक दिखाई देती है। भौतिकता की चकाचौंध में मानवीय सम्बन्धों में यांत्रिकता का स्पर्श पुरुष की तुलना में नारी को कम ही हुआ है। स्वतंत्र इकाई के रूप में प्रतिष्ठित होकर भी नारी स्वयं को समाज से पूर्णरूपेण पृथक् नहीं कर पायी है। आज सामाजिक व सांस्कृतिक भागीदारी के साथ वह अपने परम्परागत सम्बन्धों को भी निभा रही है। उसे अपने जीवन सम्बंधी निर्णय लेने की स्वतंत्रता यदि समाज ने प्रदान की है तो समाज ने उससे कुछ अपेक्षाएँ भी रखी हैं। साठोत्तरी हिंदी उपन्यासकारों ने सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों से सामंजस्य स्थापित करती हुई नारियों का चित्रण किया है। परम्परागत रूप के साथ जीवन मूल्यों की स्थापना में नारी ने प्रशंसनीय कार्य किए हैं। उसने युग की माँग को समझा है और उसी के अनुसार प्रगति की दिशा में अग्रसर होती जा रही हैं। साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में जाति, धर्म एवं वर्गगत् अंधविश्वासों, रूढ़ियों, परम्पराओं को त्यागकर नवीनता का वरण करती आधुनिकाएँ उपन्यासों में चित्रित की गई हैं। आज की नारी अपने प्रति अन्याय और समान अधिकारों के प्रति जो संघर्ष कर रही है उसका सम्यक् रूप समाज एवं उपन्यास दोनों में द्रष्टव्य है। नारी का सांस्कृतिक स्वरूप भी यहाँ दिखता है और जर्जर मान्यताओं को विखंडित करता रूप भी। अतः लोकसमाज में नारी–जीवन के जितने आयाम मौजूद हैं उन सभी आयामों की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में है।

संदर्भ

1. 'जल टूटता हुआ' : रामदरश मिश्र, पृष्ठ–33, हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, संस्करण–1966
2. 'जल टूटता हुआ' : वही, पृष्ठ–22,
3. 'थोकदार किसी की नहीं सुनता' : लक्ष्मण सिंह बिष्ट 'बटरोही', पृष्ठ– 96, विभा प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण–1988
4. 'चौथी मुट्ठी' : शैलेश मटियानी, पृष्ठ–79–80, आत्माराम एण्ड संस दिल्ली, संस्करण–1961
5. 'थोकदार किसी की नहीं सुनता' : लक्ष्मण सिंह बिष्ट 'बटरोही', पृष्ठ– 62, विभा प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण–1988
6. 'थोकदार किसी की नहीं सुनता' : वही, पृष्ठ–63
7. 'हौलदार' : शैलेश मटियानी, पृष्ठ–349, आत्माराम एण्ड संस दिल्ली, संस्करण–1961
8. 'थोकदार किसी की नहीं सुनता' : वही, पृष्ठ–46
9. 'उस चिड़िया का नाम' : पंकज बिष्ट, पृष्ठ–174, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण–1989
10. 'कथा सतीसर' : चन्द्रकांता, पृष्ठ– 23, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, संस्करण–2001
10. 'कथा सतीसर' : वही, पृष्ठ–23,
11. 'कथा सतीसर' : वही, पृष्ठ–65
12. 'कथा सतीसर' : वही, पृष्ठ–135